अब तक बैटरी चार्ज करने के लिए आपको चार्जर या किसी अन्य डिवाइस की जरूरत पड़ती रही है, लेकिन जल्द ही आपके पास ऐसी बैटरी उपलब्ध होगी, जो किसी भी तरह के चार्जर या बिजली के बिना खुद ही चार्ज हो जायेगी. हाल में अमेरिका के वैज्ञानिकों ने ऐसी सौर बैटरी विकसित करने में सफलता हासिल की है, जो हवा और प्रकाश की मदद से खुद ही रिचार्ज हो जाती है.

हवा और प्रकाश से चार्ज होगी बैटरी

अमेरिका के शोधकर्ताओं ने प्रकाश ग्रहण करनेवाले सौर पैनल और ऊर्जा को संजोनेवाली एक सस्ती बैटरी का निर्माण करने में सफलता हासिल की है. वैज्ञानिकों द्वारा तैयार की गयी यह बैटरी दुनिया की पहली सौर बैटरी है.

खुद ही चार्ज हो जाती है बैटरी

अपने इस आविष्कार के बारे में शोधकर्ताओं ने बताया है कि यह उपकरण अक्षय ऊर्जा की लागत को 25 फीसदी तक कम करने में मदद करेगा. इस उपकरण में लगा जालीदार सौर पैनल प्रकाश और ऊर्जा उत्पन्न होता है, जिससे बैटरी खुद ही चार्ज हो जाती है.

फ्यूचर टेक
अवसर डेरक

अमेरिका की ओहियो स्टेट यूनिवर्सिटी में रसायन विज्ञान और जैव-रसायन विज्ञान के प्रोफेसर यिंगिंग चु ने बताया कि इस आविष्कार में सौर पैनल का प्रयोग प्रकाश ग्रहण करने और एक सस्ती बैटरी को ऊर्जा ग्रहण करने के लिए किया गया. उन्होंने आगे बताया कि हमने दोनों को एक उपकरण में एकीकृत कर दिया. इस आविष्कार ने बिजली के नुकासान को खत्म करके सौर ऊर्जा कार्यक्षमता में लंबे समय से आ रही समस्या का भी समाधान किया है. सामान्य तौर पर ऊर्जा कार्यक्षमता तब पूरी होती है जब इलेक्ट्रॉन, सौर सेल और बाह्य बैटरी के बीच यात्रा करते हैं. आमतौर पर सौर सेल से बननेवाले इलेक्ट्रॉनों में से मात्र 80 फीसदी इलेक्ट्रॉन बैटरी में आते हैं.

सुरक्षित रहते हैं 100 फीसदी इलेक्ट्रॉन

शोधकर्ताओं ने बताया कि इस नये डिजाइन के साथ हवा को बैटरी में प्रवेश कराता है, जिससे सौर पैनल एवं बैटरी इलेक्ट्रोड के बीच इलेक्ट्रॉनों के स्थानांतरण के लिए विशेष प्रक्रिया होती है. उपकरण के अंदर होनेवाली विभिन्न रसायनिक प्रतिक्रियाओं से प्राप्त बिजली, बैटरी के अंदर ही इलेक्ट्रॉन में बदल जाती है, जिससे लगभग 100 फीसदी इलेक्ट्रॉन सुरक्षित रहते हैं. वैज्ञानिकों द्वारा किये गये इस शोध को नेचर कम्युनिकेशन जर्नल में प्रकाशित किया गया है.

सॉफ्टवेयर के मास्टर बन घर लाये खुशहाली

पैसों की कमी के चलते रास्ते बदलते लोगों का सफर में टकराना आम बात है. लेकिन मामूली-सी रकम के साथ अपने घर को छोड़ कर बड़े शहर की ओर रुख करने के लिए हिम्मत, ललक और जुनून चाहिए होता है. एक ऐसी ही मिसाल पेश की है, अमित कुमार दास ने. बिहार के छोटे से कस्बे से निकल कर विदेश तक पहुंचना और अपना व्यवसाय खड़ा करना, यह अपने आप में काबिल-ए-तारीफ उदाहरण है. यह उदाहरण युवाओं को प्रेरित करने का पूरा दम रखता है.

अमित कुमार दास का जन्म बिहार के अररिया जिले के फारबिसगंज कस्बे में रहनेवाले एक किसान परिवार में हुआ. उनके परिवार के सभी लड़के बड़े होकर अपने घरों की खेती में हाथ बंटाया करते थे. मगर अमित इस परंपरा को आगे नहीं बढ़ाना चाहते थे. वे इंजीनियर बनने का सपना देखते थे, लेकिन परिवार की आर्थिक हालत ऐसी नहीं थी कि इंजीनियरिंग की पढ़ाई का खर्च उठा सके. जैसे-तैसे अमित ने सरकारी स्कूल से पढ़ाई पूरी की और उसके बाद पटना के एएन कॉलेज से साइंस स्ट्रीम से 12वीं की परीक्षा पास की.

संघर्षों से रहा बचपन का नाता

12वीं तक आते-आते अमित के सामने सबसे बड़ी चुनौती आर्थिक मुश्किलों को हल करने की थी. ऐसे में उनके दिमाग में मछली पालन से लेकर फसल का उत्पादन दोगुना करने के लिए ट्रैक्टर खरीदने जैसे ख्याल आने लगे. लेकिन जब उन्हें पता लगा कि इसके लिए कम से कम 25,000 रुपये की जरूरत होगी, तो फिर उन्हें अपना सपना धुंधलाता हुआ-सा नजर आने लगा. स्थितियां उनकी समझ से परे थीं, पर आगे बढ़ने का सपना दिल में पक्का हो चुका था. परिवार की माली हालत सुधारने का जब कोई विकल्प सामने नहीं आया, तो अमित ने खुद को उस स्थिति से दूर किया. सिर्फ 250 रुपये लेकर वे दिल्ली की ओर रवाना हो गये.

शहर बदला, स्थितियां नहीं

दिल्ली पहुंच कर अमित को जल्द ही अहसास हो गया कि वह इंजीनियरिंग की डिग्री का खर्च नहीं उठा पायेंगे. ऐसे में वह पार्टटाइम ट्यूशंस लेने लगे. साथ ही, उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय से बीए की पढ़ाई शुरू कर दी.

अंगरेजी बनी रास्ते का कांटा

पढ़ाई के दौरान अमित को महसूस हुआ कि उन्हें कंप्यूटर सीखना चाहिए. इसी मकसद के साथ वे दिल्ली के एक प्राइवेट कंप्यूटर ट्रेनिंग सेंटर पहुंचे. सेंटर की रिसेप्शनिस्ट ने जब अमित से अंगरेजी में सवाल किये, तो वह जवाब में कुछ नहीं बोल पाये, क्योंकि अंगरेजी में भी उनके हाथ तंग थे. रिसेप्शनिस्ट ने उन्हें प्रवेश देने से इनकार कर दिया. उदास मन से लौट रहे अमित के चेहरे पर निराशा देख कर बस में बैठे एक यात्री ने उनकी उदासी का कारण जानना चाहा. वजह का खुलासा हुआ तो उसने अमित को इंगलिश स्पीकिंग कोर्स करने का सुझाव दिया. अमित को यह सुझाव अच्छा लगा और उन्होंने बिना देर किये तीन महीने का कोर्स ज्वॉइन कर लिया.

पहली सैलरी थी 500 रुपये

कोर्स पूरा होने के बाद अमित में एक नया आत्मविश्वास जाग चुका था. उसी आत्मविश्वास के साथ अमित फिर से कंप्यूटर ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट पहुंचे और प्रवेश पाने में सफल हो गये. अब अमित को दिशा मिल गयी थी. छह महीने के कंप्यूटर कोर्स में उन्होंने टॉप किया. अमित की इस उपलब्धि को देखते हुए इंस्टीट्यूट ने उन्हें तीन वर्ष का प्रोग्राम ऑफर किया. प्रोग्राम पूरा होने पर इंस्टीट्यूट ने उन्हें फैकल्टी के तौर पर नियुक्त कर लिया. वहां पहली सैलरी के रूप में उन्हें 500 रुपये मिले.

बचत से शुरू किया आइसॉफ्ट

कुछ वर्ष काम करने के बाद अमित को इंस्टीट्यूट से एक प्रोजेक्ट के लिए इंग्लैंड जाने का ऑफर मिला, लेकिन अमित ने जाने से इनकार कर दिया. वजह थी मन में अपना कारोबार करने की इच्छा. उस समय अमित की उम्र 21 वर्ष थी. कारोबार की इच्छा रखनेवाले अमित ने जॉब छोड़ने का फैसला लिया. कुछ हजार रुपये की बचत से दिल्ली में एक छोटी-सी जगह किराये पर ली और अपनी सॉफ्टवेयर कंपनी 'आइसॉफ्ट' शुरू की. 2001 में हुई इस शुरुआत से अमित काफी उत्साहित थे, लेकिन मुश्किलें खत्म नहीं हुई थीं. कुछ महीनों तक उन्हें एक भी प्रोजेक्ट नहीं मिला था. गुजारे के लिए वे जामिया मिलिया इस्लामिया यूनिवर्सिटी में रात में 8 बजे तक पढ़ाते और फिर रात भर बैठ कर सॉफ्टवेयर बनाते.

एंटरप्रेन्योर
मंजूषा

धीरे-धीरे समय बदला और अमित की कंपनी को प्रोजेक्ट मिलने लगे. अपने पहले प्रोजेक्ट के लिए उन्हें 5,000 रुपये मिले. अमित अपने संघर्ष के बारे में बताते हैं कि लैपटॉप खरीदने की क्षमता नहीं थी, इसलिए क्लाइंट्स को अपने सॉफ्टवेयर दिखाने के लिए वे पब्लिक बसों में अपना सीपीयू साथ ले जाया करते थे. इसी दौरान उन्होंने माइक्रोसॉफ्ट का प्रोफेशनल एग्जाम पास किया और इआरसिस नामक सॉफ्टवेयर डेवलप किया और उसे पेटेंट भी करवाया.

आइसॉफ्ट ने किया सिडनी का रुख

अब अमित के सपनों को उड़ान मिल चुकी थी. वर्ष 2006 में उन्हें ऑस्ट्रेलिया में एक सॉफ्टवेयर फेयर में जाने का मौका मिला. इस अवसर ने उन्हें अंतरराष्ट्रीय एक्सपोजर दिया. इससे प्रेरित होकर उन्होंने अपनी कंपनी को सिडनी ले जाने का फैसला कर लिया.

'आइसॉफ्ट' सॉफ्टवेयर टेक्नोलॉजीज ने कदम दर कदम आगे बढ़ते हुए तरक्की की. आज उसने ऐसे मुकाम को छू लिया, जहां वह 200 से ज्यादा कर्मचारियों और दुनिया भर में करीब 40 क्लाइंट्स के साथ कारोबार कर रही है. इतना ही नहीं 150 करोड़ रुपये के सालाना टर्नओवर की इस कंपनी के ऑफिस सिडनी के अलावा दुबई, दिल्ली और पटना में भी स्थित हैं.

समाजिक जिम्मेदारी पर दे रहे हैं जोर

इस ऊंचाई पर पहुंचने के बाद भी अमित कुमार दास समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाना नहीं भूले थे. वर्ष 2009 में पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने कुछ ऐसा करने का सोचा, जिस पर किसी भी पिता को गर्व हो. कहीं-न-कहीं उनके मन में अपने राज्य में शिक्षा के अवसरों की कमी का अहसास भी था. बस इसी अहसास ने उन्हें फारबिसगंज में एक कॉलेज खोलने की प्रेरणा दी.

अमित ने वर्ष 2010 में यहां कॉलेज स्थापित किया और उसका नाम अपने पिता मोती लाल दास के नाम पर रखा- मोती बाबू इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजीज. उच्च शिक्षा प्राप्त करके कुछ बनने का सपना देखनेवाले बिहार के अररिया जिले के युवाओं के लिए इससे अच्छा उपहार कोई और नहीं हो सकता था.

बढ़ा रहे हैं नेकी की ओर कदम

अमित ने अपनी पहचान उन चुनिंदा लोगों में करवायी है, जो जीवन में एक सफल मुकाम पाने के बाद समाज को लौटाने के लिए सक्रिय रहते हैं. सालों पहले जिस कमी के कारण अमित को अपना राज्य छोड़ना पड़ा, आज उसी कमी को दूर करने के लिए वे प्रयासरत हैं.

करोड़ों रुपये के निवेश के साथ वे अपने राज्य को एक शिक्षण संस्थान और सुपर स्पेशिलिटी हॉस्पिटल का उपहार दे चुके हैं और बुनियादी सुविधाओं के विकास के लिए सरकार की मदद भी कर रहे हैं.

'हमारी जिम्मेदारी है समाज'

समाज के लिए कुछ करने की अपनी प्रेरणा के बारे में बताते हुए अमित कहते हैं कि हम सभी को अपने समाज के प्रति उतना ही जिम्मेवार होना चाहिए, जितने कि अपने परिवार के प्रति होते हैं. इसलिए समाज की भलाई की दिशा में कुछ करने के लिए जितना संभव हो, उतना प्रयास हम सभी को करना चाहिए.

देश में सबसे ज्यादा पढ़ाई के लिए हो रहा है मोबाइल और पीसी का इस्तेमाल

ज्यूनिपर ग्लोबल *बैंडविड्थ* इंडेक्स रिपोर्ट के अनुसार...

अब तक लोग मोबाइल और पर्सनल कंप्यूटर्स का इस्तेमाल जानकारी प्राप्त करने के लिए करते थे. लेकिन भारत में अब इनका इस्तेमाल शिक्षा और पेशेवर कार्यों के लिए होता है. आइटी कंपनी ज्यूनिपर नेटवर्क्स के एक अध्ययन के अनुसार अमेरिका व जापान जैसे विकसित देशों की तुलना में भारत में शिक्षा व पेशे में मोबाइल, पीसी का अधिक इस्तेमाल हो रहा है.

45 %

भारतियों ने कहा कि कनेक्टिविटी ने पाठ्य पुस्तकों और शिक्षा के टूल्स तक उनकी पहुंच में आधारभूत बदलाव ला दिया है.

7 %

जापान के लोगों ने इस तथ्य पर सहमति जतायी है.

■ **सर्वेक्षण में शामिल 9 देशों में पेशे या व्यक्तिगत इस्तेमाल के लिए कनेक्टेड उपकरणों के इस्तेमाल के मामले में भारत, दक्षिण अफ्रीका के बाद दूसरे स्थान पर रहा.**

■ इस सर्वेक्षण में ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी, जापान, ब्रिटेन और अमेरिका जैसे विकसित देशों और ब्राजील, चीन, भारत व दक्षिण अफ्रीका जैसे उभरते देशों के 5,500 बालिग लोगों के विचार लिये गये.

अपने काम से कर दीजिये आलोचकों का मुंह बंद

पर्सनालिटी प्लस
आशीष आदर्श
कैरियर काउंसेलर
aashish500@gmail.com

सफलता की इमारत उन ईंटों से बनी हुई बुनियाद पर बनायी जा सकती है, जिन ईंटों को दूसरों ने हम पर फेंका है. यदि हम नकारात्मक और निराशावादी टिप्पणियों का प्रभाव स्वयं पर न होने दें, तो हमारी पूरी ऊर्जा हमारे उद्देश्य पर लगेगी और सफलता को बेहद करीब देखने का अनुभव हमें होने लगेगा.

ई बार हमें यह महसूस होता है कि हमारे आसपास नकारात्मक ऊर्जा का भंडार है. अगर हम कुछ करना चाहते हैं, तो लोग इतनी नकारात्मक बातें करते हैं कि हमारी सभी आशाएं, निराशा में बदल जाती हैं. चाणक्य ने कहा था, 'आपकी मर्जी के बगैर आपको कोई निराश, हताश या दुखी नहीं कर सकता.' इसलिए हमें केवल अपने मन की बात सुननी चाहिए. यदि हमने कोई उपलब्धि हासिल की तो आलोचकों का मुंह हमेशा के लिए स्वतः ही बंद हो जायेगा. आज की यह बिलकुल सच्ची कहानी हमें इस रहस्य को बेहतर ढंग से समझने में मदद करेगी.

बात कुछ वर्ष पहले की है. वाराणसी में एक रिक्शावाला हुआ करता था. दिन भर कड़ी मेहनत के बाद कुल 20-30 रुपये कमा पाता, जिससे किसी प्रकार उसकी पत्नी और बेटा गुजर बसर कर पाते. उस रिक्शेवाले का बेटा गोविंद मेधावी था और पढ़ने में बेहद तेज. जब वह आठवीं कक्षा का छात्र था, तो उसने सोचा कि क्यों न छोटे बच्चों का कोई ट्यूशन ले लूं, ताकि घर की भी थोड़ी मदद हो जाये और थोड़ा पढ़ाई का भी खर्च निकल जाये. उसने छोटे बच्चों को ट्यूशन पढ़ना शुरू कर दिया, जिससे उसे महीने के 150-200 रुपये मिल जाते. यह सब देख कर आसपास के लोग उसकी खिल्ली उड़ाते और कहते, कितना भी पढ़ लो, बड़े होकर तो तुम्हें रिक्शा ही चलाना है. जब लोगों के प्रहार तेज हो जाते, तो गोविंद अपने कान में रुई डाल लेता और अपने काम ने लगा रहता. उसका गणित विषय मजबूत था. उसके शिक्षकों ने उसे बारहवीं के बाद इंजीनियरिंग करने का सुझाव दिया. जब वह इंजीनियरिंग का फॉर्म भरने गया, तो उसे पता चला कि फॉर्म की फीस 500 रुपये है. उसने इस विचार को त्याग दिया और विश्वविद्यालय में बीएससी में दाखिला ले लिया, क्योंकि उसकी फीस 10 रुपये थी. स्नातक के बाद गोविंद ने सिविल सर्विस की तैयारी के लिए दिल्ली जाने की योजना बनायी. दिल्ली पहुंच कर उसने एक कोचिंग में दाखिला लिया ही था कि उसे पता चला कि उसके पिता के पैर में गहरा घाव हो गया है और वह अब रिक्शा भी नहीं चला सकते. गोविंद ने सोचा कि अब पढ़ाई छोड़ कर बनारस चला जाये और वहीं कुछ किया जाये, ताकि परिवार को सड़क पर लाने से बचाया जा सके. परंतु पिता ने उसे पढ़ाई जारी रखने का आदेश दिया. पिता की एक छोटी-सी जमीन थी, जिसकी कीमत लगभग 30,000 रुपये थी. पिता ने तुरंत उस जमीन का सौदा किया और रुपये गोविंद को भेज दिये, ताकि उसकी पढ़ाई बीच में न छूटे. गोविंद ने अपनी पढ़ाई पूरी की और सिविल सेवा की परीक्षा में बैठा. जब फाइनल रिजल्ट आया तो, गोविंद और उसके पूरे परिवार की किस्मत हमेशा-हमेशा के लिए बदल गयी. महज 24 वर्ष की आयु में गोविंद जायसवाल ने अपने प्रथम प्रयास में ही सिविल सेवा में देश में 48वां स्थान प्राप्त कर लिया था. गोविंद की यह कहानी वर्षों तक हमें प्रेरित करती रहेगी.

किसी महान विचारक ने कहा है कि सफलता की इमारत उन ईंटों से बनी हुई बुनियाद पर ही बनायीं जा सकती है, जिन ईंटों को दूसरों ने हम पर फेंका है. यदि हम नकारात्मक और निराशावादी टिप्पणियों का प्रभाव स्वयं पर न होने दें, तो हमारी पूरी ऊर्जा हमारे उद्देश्य पर लगेगी और सफलता को बेहद करीब देखने का अनुभव हमें होने लगेगा.